नयी समाज-रचनाके लिअे शिक्षा

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १९ | सम्पादक : मगनभाई प्रभुदास देसाई | अंक २३

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-१४

अहमदाबाद, शनिवार, ता० ६ अगस्त, १९५५

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

भूदान — प्रेम और करुणाका आन्दोलन — २

[पिछले अंकके अनुसंधानमें यह राजाजीका अुपसंहारात्मक भाषण है, जो अुन्होंने तामिलनाड सर्वोदय सम्मेलनमें दूसरे दिन दिया था।]

यह सम्मेलन सर्वोदय आन्दोलनके लिअे किया जा रहा है, जिसमें गांधीजी द्वारा बताये हुअे और आरम्भ किये हुअे विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रमोंका समावेश होता है। खादी-कार्यकर्ताओं और हरिजनसेवकोंने अपने कार्यक्रमोंकी चर्चा की है। अिन सब सभाओंमें चर्चाका मुख्य विषय था भूदान। अुनमें यह भी विचारा गया कि रचनात्मक कार्यकर्ता भूदानकी प्रगतिको कैसे तेज कर सकते हैं।

भूदान और दूसरी प्रवृत्तियां

हम जिस किसी सेवाकार्यमें लगे होते हैं, अुसमें कुछ समय बाद अेकका अेक काम करते करते हम अूबने लगते हैं और अिसलिअे सेवाका दूसरा क्षेत्र खोजना चाहते हैं। लेकिन जो भी काम हमने हाथमें लिया है, अुसी अेक काम पर हमें अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर देना चाहिये। कार्यकर्ताको हमेशा वही अेक और संपूर्ण ध्येय अपने सामने रखना चाहिये। अुसी पर अुसे अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर देना चाहिये। दुनियामें अुसके आसपास कोअी भी कार्य क्यों न चल रहे हों, अुसे अपने ध्यानको अपने कार्यसे कभी हटने नहीं देना चाहिये।

गांधीजी अिस अेकाग्रता पर बहुत जोर देते थे और सारा रचनात्मक कार्य अिसी ढंगसे किया जाता था। वे हरिजन-सेवकोंसे कहते थे कि आप जेलमें न जायें। अगर ये कार्यकर्ता अिन सारे रचनात्मक कार्योंको छोड़कर भूदान-आन्दोलनमें शरीक हो जायं तो यह ठीक नहीं होगा।

अच्छे काम करनेकी आकांक्षा रखना अच्छी बात है। भूदान अेक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह सच है कि कार्यकर्ता अुसमें शामिल होना चाहते हैं, क्योंकि वह अेक धार्मिक आन्दोलन है जो दुनियाको बचानेवाला है। परन्तु अैसे कार्यक्रमोंको, जिन्हें गांधीजी जैसे महान् नेता राष्ट्र-हितके लिअे आवश्यक मानते थे, अिसलिअे नहीं छोड़ देना चाहिये कि वे पुराने हो गये हैं। पुराने हो जाने पर भी अुनका महत्त्व कम नहीं हुआ है।

खादी और हरिजन आन्दोलन

खादी-कार्य और हरिजन आन्दोलनके ध्येय और अुद्देश्य अभी सिद्ध नहीं हुअे हैं। ये आन्दोलन अगर सही दिशामें कारगर ढंगसे नहीं चलाये जायंगे तो मर जायंगे। जो प्रवृत्ति नष्ट हो जाती है अुसे फिर नये सिरेसे शुरू करना असंभव होता है। अिसलिअे अैसे रचनात्मक कार्य छोड़े नहीं जाने चाहिये, जिन्हें लोग महत्त्वपूर्ण मानते हैं। अैसे कार्यकर्ता, जो किसी खास कार्यके लिअे अुपयोगी नहीं हैं और अतिरिक्त कार्यकर्ता अेक कार्य छोड़कर दूसरे कार्यमें शरीक हो सकते हैं। लेकिन जिन लोगोंने किसी आन्दोलनको सफलतासे चलानेके लिअे ओमानदारीके साथ कड़ी मेहनत की है और जो अुसके लिअे अनिवार्य सिद्ध हो चुके हैं, अुन्हें अपने आन्दोलनको नहीं छोड़ना चाहिये।

जब कोअी कार्यकर्ता अेक सेवाकार्यको छोड़े, तो अुसे अिस बातका अच्छी तरह विचार करना चाहिये कि वह अुसे क्यों छोड़ना चाहता है और अुसके बाद ही अपना निर्णय करना चाहिये। अुसे अपने मनमें अिस बातकी जांच करनी चाहिये कि कहीं कामकी अरुचि या अुतांवली तो अुसे अपना काम छोड़नेके लिअे प्रेरित नहीं कर रही है। अगर अुसे लगे कि जिस काममें वह लगा हुआ है अुसे अुसके छोड़कर अन्यत्र चले जानेसे कोअी नुकसान नहीं पहुंचेगा, तो वह अपना मौजूदा काम छोड़ सकता है। लेकिन जो लोग बड़े बड़े आन्दोलनोंमें आधार-स्तंभोंकी तरह काम करते हैं, अुन्हें अपने आन्दोलनोंको नहीं छोड़ना चाहिये। यह सुझाव मैं आपके समक्ष भय और हिचकिचाहटके साथ रखता हूं। आप अिस पर भलीभांति विचार करें और स्वयं ही निर्णय करें।

भूदान-आन्दोलनमें संख्याका अुतना महत्त्व नहीं है; अुसमें चारित्र्य और गुणका महत्त्व है। जमीन-मालिक अिसलिअे अपनी जमीन नहीं देता कि बहुतसे लोग अुसे समझानेके लिअे आते हैं। और हमारे देशके जमींदार योग्य और चतुर हैं। वे प्रभावशाली भी हैं। केवल दृढ़ प्रभाव और अच्छे चरित्रवाले लोग ही अुन्हें स्वेच्छासे अपनी जमीन छोड़नेके लिअे राजी कर सकते हैं। अेक सामान्य खादी-कार्यकर्ता अपना कार्य छोड़कर भूदानमें शरीक होनेके कारण शायद ही जमीन-मालिकको जमीन देनेके लिअे राजी कर सकता है।

अस्पृश्यता-निवारणके पीछे अब कानूनका बल है। हमें लोगोंके मन बदलनेके लिअे यह कार्य जारी रखना होगा। अिससे सरकारके काममें मदद होगी। अिस कामको हम तेजीसे और जल्दी करानेकी अिच्छा रखेंगे तो अैसी परिस्थितियां पैदा हो सकती हैं जिनमें पुलिसकी मदद लेना जरूरी हो जाय। लेकिन पुलिसका मार्ग कार्यकर्ताओंका मार्ग नहीं है। अुन्हें लोगोंके पास पहुंचना चाहिये और धीरे-धीरे अुनके दिल बदलनेकी कोशिश करनी चाहिये।

दो तरहके प्रभाव

प्रभाव दो तरहके होते हैं। अेक अच्छे मनुष्योंके शब्दोंका प्रभाव होता है, और दूसरा पदारूढ़ लोगोंकी सत्ताका होता है। अच्छा और मजबूत मकान बनानेके लिअे अच्छी और पक्की अींटें निहायत जरूरी हैं। अुसी तरह भूदान-आन्दोलनकी सफलताके लिअे अहिंसाका होना अत्यन्त जरूरी है। गहरे विश्लेषणसे मुझे लगता है कि अिस भूदान-आन्दोलनका अुद्देश्य मनुष्योंमें धर्मकी भावनाको फिरसे पैदा करना है, जिसे अुन्होंने भुला दिया है। व्यक्ति जायदाद या संपत्ति रख सकता है, लेकिन अुसे वह संपत्ति लोक-हितके लिअे ट्रस्टी बनकर रखनी चाहिये। गांधीजी अिसी तरहकी ट्रस्टीशिप चाहते थे।

www.vinoba.in

सच्चा अुद्देश्य

कानूनके जरिये संपत्तिका बंटवारा करना हिंसा होगी। आज जिन्हें जमीन मिली है, वे आगे जरूर अधिक अुत्पादन करेंगे। बढ़ा हुआ अुत्पादन सब लोगोंको सुखी बनायेगा। भूदानका अुद्देश्य अहिंसक अुपायों द्वारा गरीब अनुभवी किसानको जमीन जोतने और फसल पैदा करनेका अधिकार दिलाना है।

गांवोंमें अेकताकी भावना

जो खेतीका काम करते हैं, अुन्हें जमीन मिलनी ही चाहिये। अगर गांवके सारे लोगोंमें यह भावना अुत्पन्न कर दी जाय कि वे सब अेक हैं, तो यह आन्दोलन अपने-आप सफल हो जायगा। कार्यकर्ताओंका अधिकांश प्रयत्न गांवके लोगोंमें यह अेकताकी भावना जाग्रत करनेका होना चाहिये। जीप गाड़ियोंमें लाअुड स्पीकर लगाकर गांवोंमें दौरा करने और बुलन्द आवाजमें नारे लगानेसे बहुत काम नहीं होगा। गांवके बड़े-बूढ़ोंको आवश्यक वातावरण निर्माण करनेमें मदद पहुंचानेके लिअे बुलाना चाहिये। अुन्हें करुणा और प्रेमसे अपनी जमीनें देनेके लिअे धीरे-धीरे समझाना चाहिये। आज सारी दुनिया अिस आन्दोलनकी ओर देख रही है। प्रश्न केवल अेक आदमीसे जमीन लेकर दूसरे आदमीको जमीन देनेका नहीं है। अिस आन्दोलनका अुद्देश्य लोगोंमें सच्चा मानसिक परिवर्तन करना है, ताकि हर आदमी अपने धर्मका पालन करने लगे। अगर भारतकी जमीन-समस्या प्रेमसे हल हो जाती है, तो वह सारी दुनियाका मार्गदर्शक बन जायेगा।*

(अंग्रेजीसे) च० राजगोपालाचार्य

व्यापारिक विज्ञापन

आधुनिक यंत्रोद्योगोंके द्वारा अुत्पादनमें हुअी विपुल वृद्धिके साथ विज्ञापनका महत्त्व बहुत बढ़ गया है। हमारे अर्थप्रधान समाजमें वह काफी बड़ा हिस्सा अदा करता है और अुसका बड़ा प्रभाव है। अुसका आगमन यंत्रोंके द्वारा हो रहे विपुल अुत्पादनको बाजारमें बेंचनेकी समस्याओंके साथ हुआ। अैसी स्थितिमें वह अुद्योगवादकी छूतसे कैसे बच सकता था?

अेक अमरीकी पत्रकारके साथ अपनी बातचीतका अुपसंहार करते हुअे गांधीजीने कहा था, "मेरा मत है कि अुद्योगवादमें जो बुराअियां हैं वे अुसका अभिन्न अंग हैं और अुद्योगोंका कितना भी समाजीकरण क्यों न किया जाय वे दूर नहीं की जा सकतीं।" (हरिजन, २९–९–'४०) साथ ही पश्चिममें दूसरे छोर पर विल्फ्रेड वेलॉक अब यह कह रहे हैं कि "... औद्योगिक क्रान्तिकी जड़ अन्यायमें थी और हिंसा अुसके अुद्देश्यों और साधनोंमें अुनके अेक अभिन्न अंगकी तरह समायी हुअी थी। ... अुसके अुद्देश्य थे अधिकतम अुत्पादन, अधिकतम विक्रय और अधिकतम मुनाफा। और अुसके साधन थे अल्पतम मजदूरी, कामके अधिकतम घंटे, पक्के मालको सबसे महंगे बाजारोंमें बेचकर अधिकतम कीमत प्राप्त करना और कच्चे मालको सबसे सस्ते बाजारोंमें खरीदकर लागत खर्च अल्पतम रखना।"+

अुदाहरणके लिअे, नोबुल पुरस्कार-प्राप्त प्रसिद्ध डाक्टर अॅलेक्सिस कैरेलका यह कथन देखिये, जो अुपरोक्त तथ्यका समर्थन करता है। अपनी 'मैन दी अननोन' (पेलिकन बुक्स, १९४८ में प्रकाशित) पुस्तकमें पृष्ठ ३६ पर वे लिखते हैं:

> "हमारे जीवन पर व्यापारिक विज्ञापनका प्रभाव काफी बड़ी मात्रामें होता है। विज्ञापनके द्वारा वस्तुओंको दी जानेवाली यह सारी प्रसिद्धि विज्ञापनदाताओंके हितमें दी जाती है, अुपभोक्ताओंके हितमें नहीं। अुदाहरणके लिअे, लोगोंमें विज्ञापनके जरिये यह विश्वास पैदा किया गया है कि साबित गेहूंकी रोटीके बजाय मैदेकी बनी हुअी सफेद रोटी ज्यादा अच्छी है। आटा अधिकाधिक छाना जाता है और अुसे अुसके अुपयोगी अुपादानोंसे रहित कर दिया जाता है। अैसा करनेसे वह ज्यादा दिन टिकता है और रोटी बनानेमें आसानी होती है। आटा-मिलोंके मालिकों और रोटी बनानेवालोंको ज्यादा पैसा मिलता है। लेकिन खानेवाले घटिया रोटी खाते हैं और अुसे बढ़िया मानते हैं। और जिन देशोंमें रोटी ही मुख्य भोजन है, जनताका स्वास्थ्य दिन-पर-दिन खराब होता जाता है। विज्ञापन पर जाने कितना पैसा बरबाद किया जाता है। फलतः कितनी ही दवाअियां और टानिक —जो बिलकुल निरुपयोगी हैं और बहुत बार हानि भी करते हैं— सभ्य लोगोंके लिअे आवश्यकता बन गये हैं। अिस तरह जो अपने मालकी बिक्रीके लिअे लोगोंमें मांग पैदा करनेकी चतुराअी रखते हैं, अैसे चन्द व्यक्तियोंकी लोभ-वृत्ति आजकी दुनियामें प्रधान हिस्सा अदा करती है।"

डा० कैरेलने यह बात युरोप और अमेरिकाके बारेमें लिखी है, लेकिन विज्ञापनकी यही प्रक्रिया गरीब भारतमें भी काफी बढ़ गयी है। अुदाहरणके लिअे, हमारे समाचारपत्रोंको टी० बोर्ड द्वारा प्रचारित अिस तरहके विज्ञापन छापनेमें कोअी संकोच नहीं होता जिनमें चायको बच्चों तकके लिअे — जिन्हें सामान्यतः आदत डालनेवाले व्यसनोंसे बचाया जाना चाहिये — आवश्यक बताया जाता है। 'ब्वाय स्काअुट्स' पत्रके अनुसार बढ़नेकी अुम्रवाले बच्चोंको खासकर चाय, कॉफी और अिसी तरहके दूसरे अुत्तेजक पदार्थोंसे कोअी सरोकार नहीं रखना चाहिये। ('ब्वाय स्काअुट्स ऑफ अमेरिका' पृ० ३३२) हमारी अुपेक्षा और सामाजिक नियंत्रणके अभावके कारण अिस तरहके विज्ञापनोंको हमारी रहन-सहनकी सुस्थित और लाभप्रद रीतियोंको अुखाड़नेमें आखिर कितना समय लगेगा?

पश्चिममें बुद्धिमान् विचारशील लोगोंकी अेक बढ़ती हुअी संख्या जिस चीजको वहां प्रगति माना जा रहा है अुसकी बुराअियों और बरबादियोंके बारेमें चिन्ता अनुभव कर रही है। यहां हम अुसी तथाकथित प्रगतिका, अुसे सभ्यताका शीर्ष मानकर, स्वागत कर रहे हैं। आज जब हम स्वतंत्र हैं, तब जो लोग हमें गुलाम बनाकर हमारे अूपर शासन कर रहे थे, अुनके तरीकोंकी नकल करना और यह सोचना कि अुनके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता मूर्खताकी पराकाष्ठा है। अुसका अर्थ यह होगा कि आजादीके साथ हममें आत्मसम्मानकी जो भावना आनी चाहिये थी, वह नहीं आयी।

मुनाफाखोर देशकी और अुसके गरीबोंकी कोअी परवाह नहीं करते। समाचारपत्र तक बड़ी अुदारताके साथ अुनकी बात सुनते हैं, गोया आदर्शोंकी कोअी कीमत ही नहीं है। होना तो यह चाहिये था कि वे हमें चेतावनी देते और हमारे पुराने शासक यहां जिन चीजोंका प्रचलन कर गये हैं अुन्हें भूलनेमें और सदियोंकी गुलामीके फलस्वरूप जो बुराअियां हममें आ गयी हैं, अुनसे लड़नेकी शक्ति और साधन प्राप्त करनेमें हमारी मदद करते।

क्षितीन्द्रकुमार नाग

(अंग्रेजीसे)

भूल-सुधार

३० जुलाअी, १९५५ के अंकमें छपे 'सबके लिअे शिक्षण' लेखमें मैंने बम्बअीके अेक पत्रसे अुद्धरण दिये हैं, जिसका नाम 'अिकॉनामिक वीकली' है, न कि 'अिकॉनामिक रिव्यू' जैसा कि मैंने गलतीसे लिखा है। अिस गलतीके लिअे मुझे बड़ा दुःख है। आशा है वह पत्र मुझे अिसके लिअे क्षमा कर देगा।

२–८–'५५ म० प्र०

---

* जुलाअी १९५५ के 'सर्वोदय' से संक्षिप्त।

+ हरिजन, २७–१२–'५२ में 'अे परमानेन्ट वार-मेकिंग अिकानॉमी' शीर्षकके अन्तर्गत अुद्धृत अुनके लेखसे।

www.vinoba.in

बी० सी० जी० का टीका

बी० सी० जी० का सवाल जबसे बी० सी० जी० का टीका शुरू हुआ है तभीसे विवादका विषय रहा है और डाक्टरी विद्याके तज्ज्ञोंमें आज भी अुसकी अुपयोगिताके बारेमें मतभेद हैं। स्वास्थ्यमंत्री श्री लैन मेकलाअिडने तृतीय राष्ट्र मंडलीय स्वास्थ्य और क्षयरोग परिषद्में भाषण करते हुअे कहा था कि "हमारा खयाल है कि बी० सी० जी० के टीकेकी लसीको बेसमझेबूझे सामान्य अुपयोगके लिअे अुपलब्ध कर दिया जाय, अैसा समय अभी नहीं आया है। यद्यपि कुछ लोगोंको हमारे अिस विचारमें अनुचित प्रतिबंध और नियंत्रण मालूम होगा, लेकिन मैं बता देना चाहता हूं कि वह जिम्मेदार विशेषज्ञों द्वारा किये गये निर्णय पर आधारित है और अुसका कारण आर्थिक कठिनाअी या अुक्त लसीके अुत्पादनकी कमी नहीं है।"

बी० सी० जी० के टीकेके लिअे कोअी वैज्ञानिक आधार नहीं है और डाक्टरी विद्याके विशेषज्ञ अैसे आधारकी खोज अभी भी कर रहे हैं। अैसी हालतमें, यानी जब कि अिस प्रश्नका अन्तिम निर्णय नहीं हुआ है, हरअेक स्त्री-पुरुषको अिस बातका निर्णय खुद ही करना चाहिये कि वह यह टीका लगवाये या न लगवाये।

बी० सी० जी० है क्या?

बी० सी० जी० में क्षय-रोगके जीवित कीटाणु होते हैं, यद्यपि वे बहुत कमजोर कर दिये गये होते हैं। प्रत्येक टीकेमें अिन कीटाणुओंकी संख्या कअी लाख होती है। कअी प्रकारकी लसियोंका प्रयोग किया जा चुका है; कुछमें मृत कीटाणुओंका अुपयोग हुआ है तो कुछमें जीवित कीटाणुओंका, और शोध अभी भी चल रही है। कुछ दिन तक यह लसी मुंहसे दी जाती रही। लेकिन अब वह अिन्जेक्शनके जरिये दी जाती है। बी० सी० जी० के विषयमें यह दावा किया जाता है कि वह अितनी ताकत तो रखती है कि जिसे अुसका टीका दिया जाय, अुसकी क्षय-रोगका प्रतिरोध करनेकी शक्ति बढ़ जाय, लेकिन रोगको अुत्पन्न करनेकी शक्ति अुसमें नहीं है। अेक विशेष प्रकारके शूकर (सूअर) पर, जिसे अंग्रेजीमें गिनी-पिग कहते हैं, क्षय-रोग बहुत जल्दी अपना असर दिखाता है और अिसलिअे क्षय-रोगसे संबंधित शोधमें अुसका बहुत प्रयोग किया जाता है। बहुतेरे प्रयोगोंमें यह देखा गया है कि जिन शूकरोंको यह टीका दिया गया अुन्हें यह रोग कम या ज्यादा हुआ ही। अिससे मालूम होता है कि बी० सी० जी० के टीकेमें हमेशा यह संभावना है कि वह क्षयको रोकनेके बजाय पैदा कर दे या यदि रोग सुप्तावस्थामें पड़ा हो तो अुसे जगा दे।

टीकेसे मनुष्यके शरीरके अन्दर क्षय रोगके लाखों-करोड़ों कीटाणु दाखिल कर दिये जाते हैं। जाहिर है कि यह प्रक्रिया प्रकृतिके अपने स्वाभाविक कार्यक्रममें अनुचित हस्तक्षेप करती है और यह नहीं कहा जा सकता कि अुसका अन्तिम परिणाम क्या होगा। किसी स्वस्थ आदमीके शरीरमें टीकेके जरिये अिस तरह विजातीय द्रव्य भरना बर्फ पर स्केटिंग करने जैसा ही खतरनाक है।

विज्ञान बनाम रूढ़ मान्यता

बी० सी० जी० के विषयमें डाक्टरोंमें अुग्र मतभेद और अुसके खिलाफ ठोस प्रमाणोंके बावजूद चिकित्सा-विज्ञान पर लिखने-बोलनेवाले कअी लोग अभी भी तोतेकी तरह बी० सी० जी० के चमत्कारोंका वर्णन करते चले जाते हैं। डाक्टरी पढ़नेवालोंको अपनी पढ़ाअीके दिनोंमें टीकेकी अुपयोगिताको किसी तरहका सन्देह किये बिना स्वीकार कर लेना सिखाया जाता है। अिसलिअे कुदरतन् अिस विषयमें वे लकीरके फकीर होते हैं और डाक्टरी पेशेके नेतागण जो कुछ कहते हैं, वही वे भी कहते हैं। टीकेमें अुनका विश्वास अेक रूढ़ मान्यताका स्वीकार है। और जब वे अपनी पढ़ाअी समाप्त कर चुकते हैं, तब तक अितनी देर हो जाती है कि अुनके लिअे अपना विचार बदलना संभव नहीं रह जाता। तब अुनके लिअे ज्यादा आसान यही होता है कि वे अपने रूढ़िवादी नेताओंके ही साथ रहें और अुनकी हां में हां मिलायें। कोअी डाक्टर बी० सी० जी० के टीकेके खिलाफ होनेकी घोषणा तभी कर सकता है, जब अुसमें बहुत ज्यादा साहस हो। कोअी चीज अेक बार लोकप्रिय हो जाय —और चमत्कारोंकी कहानियां लोकप्रिय होती ही हैं— तो अुसके चल पड़नेके बाद अुसे रोकना असंभव हो जाता है। अुसे कितनी ही बार और कितनी ही प्रामाणिकतापूर्वक क्यों न असिद्ध कर दिया जाय, पूरी जानकारी न रखनेवाले अज्ञानी लोग अुसकी तारीफ करते ही रहते हैं।

क्षय-रोगके कारण

क्षय-रोगका अेकमात्र कारण अुचित पोषक आहारकी कमी और अस्वास्थ्यकर वातावरण है। क्षय-रोग वहीं फैलता है जहां गरीबी और अस्वच्छताकी परिस्थितियां होती हैं। द्वितीय महायुद्ध और देशके विभाजनसे क्षय-रोगको बढ़ावा मिला है, क्योंकि सामान्य जनताकी आर्थिक परिस्थितिमें बड़ी अवनति हुअी है। जीवन-मान ज्यों-ज्यों अूंचा अुठता है, त्यों-त्यों क्षय-रोगके विस्तारमें अपने-आप कमी आती है। लेकिन डाक्टरीके धंधेमें पड़े हुअे लोग अिस बुनियादी तथ्यको अुचित महत्त्व नहीं देते और रोगकी घटती-बढ़तीको बी० सी० जी० के टीकेके अधिक या कम प्रचारका परिणाम बतलाते हैं। डाक्टरोंका कहना है कि बी० सी० जी० का टीका शुरू हुआ अुसके पहिले अिस रोगसे बहुत ज्यादा लोग मरते थे। अुनके अिस प्रचारके कारण सामान्य आदमी अैसा खयाल करने लगता है कि अुक्त टीकेके पहले क्षय-रोग कोअी बहुत भयंकर शत्रु था जिसे जीता ही नहीं जा सकता था। बी० सी० जी० का व्यापक अुपयोग हमारा ध्यान अिस रोगके ज्यादा महत्त्व-पूर्ण कारणोंसे हटायेगा और अिस तरह देशकी असीम हानि करेगा।

क्षयके निवारणका सही अुपाय

क्षयके निवारणका अेकमात्र विचारशुद्ध अुपाय रक्तमें अिस लसीको दाखिल करके अुसे विषाक्त करना नहीं, बल्कि अुन सब बातोंकी वृद्धि और योजना करना है जो शरीरकी ताकत बढ़ाती हैं और व्यक्ति तथा समाज दोनोंके सामान्य स्वास्थ्यको बल पहुंचाती हैं। अिस रोगसे रक्षण करनेकी सही सामर्थ्य केवल शरीरकी स्वाभाविक शक्ति तथा स्वास्थ्यकर जीवन-पद्धतिमें ही है। टीका अिसमें कोअी सहायता नहीं कर सकता; हां वह अुनकी हानि अवश्य कर सकता है और करता है। रोगका अेकमात्र सच्चा अिलाज तो अिसीमें है कि विवेकयुक्त जीवन-पद्धति अपनाकर शरीरकी रोग-निवारक शक्तिका पोषण किया जाय।

डाक्टरोंसे

क्षय-रोगके लिअे कोअी डाक्टरोंको दोष नहीं देता और बी० सी० जी० के टीकेके प्रचारके पीछे शुभ हेतु हो सकता है। लेकिन बी० सी० जी० के समर्थकोंको भी समझ लेना चाहिये कि अुसके विरोधी भी अपना कार्य किसी स्वार्थके लिअे नहीं कर रहे हैं। अिस बातको ध्यानमें रखकर बी० सी० जी० के प्रचारकोंको अपनी स्थिति पर पुनर्विचार करना चाहिये और सच्चे खिलाड़ीकी वृत्तिसे सत्यको स्वीकार कर लेना चाहिये। अन्यथा अिस टीकेका व्यापक प्रयोग लोगोंके मनमें झूठी सुरक्षाका विचार पैदा करेगा और परिणाम यह होगा कि क्षय-रोग सचमुच जिन परिस्थितियोंके कारण होता है, अुनके सुधारका काम टलेगा।

(अंग्रेजीसे)

श्याम के० पंडित

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

६ अगस्त १९५५

नयी समाज-रचनाके लिअे शिक्षा

कलकत्तेकी 'अमृत बाजार पत्रिका' अपने ७ जुलाअी, १९५५ के अंकमें 'दूसरी योजनामें शिक्षा' की चर्चा करते हुअे लिखती है, "योजनाके रचयिता निश्चित रूपसे बुनियादी शिक्षाको पसन्द करते मालूम होते हैं। लेकिन क्या बुनियादी शिक्षा अुन शहरी या देहाती अिलाकोंमें भी दाखिल की जायगी जिन्होंने साहित्यिक शिक्षाके प्रति निश्चित पसन्दगी व्यक्त की है?"

अिसी विषय पर आगे लिखते हुअे पत्र कहता है कि "अभी कुछ दिन पहले रांचीमें बोलते हुअे डॉ० अमरनाथ झाने शिक्षाके क्षेत्रमें सह-अस्तित्वके सिद्धान्तका पालन करनेकी जोरदार हिमायत की। अुन्होंने अुग्रतापूर्वक पूछा कि 'योजना-कमीशनको अिस बातका कोअी अधिकार नहीं कि वह देशको आदेश करे कि अब देशमें केवल बुनियादी शिक्षा ही रहेगी।'"

क्या बुनियादी शिक्षा जिसे साहित्यिक शिक्षा कहा जाता है अुसकी अुलटी है? निस्सन्देह बुनियादी शिक्षा साहित्यिक शिक्षाको अस्वीकार नहीं करती और न अपने क्षेत्रसे अुसका बहिष्कार करती है; बल्कि अुसका अुद्देश्य साहित्यिक शिक्षाको ज्यादा अच्छे और सही ढंग पर देना है। अिसके सिवा, वह सब लोगोंको 'फन्डामेन्टल' या आधारभूत शिक्षा प्राप्त करा देना चाहती है और अिस 'फन्डामेन्टल' शिक्षामें साहित्यिक शिक्षाका समावेश हो जाता है। साहित्यिक शिक्षा मेरा खयाल है अुस शिक्षा-प्रणालीका नाम है, जो हमारे देशमें ब्रिटिश शासन-कालमें प्रचलित हुअी। हमारी जनता पर अुसका क्या परिणाम हुआ है, अिस दृष्टिसे देखें तो मालूम होता है कि जहां पहले हमारे यहां ८०% साक्षरता थी, वहां अिस प्रणालीके दाखिल होनेके बाद परिस्थिति बिलकुल अुलट गयी यानी ८०% साक्षरताके बजाय ८०% निरक्षरता आ गयी। अिसलिअे सच पूछा जाय तो विदेशी शासकोंसे विरासतके रूपमें मिली हुअी यह शिक्षा-प्रणाली, जिसे अुसके हिमायती साहित्यिक शिक्षा कहते हैं, असलमें साहित्यिक शिक्षा फैलानेवाली नहीं, निरक्षरता फैलानेवाली शिक्षा-प्रणाली है। अिसलिअे सवाल दो अच्छी और स्वतंत्र वस्तुओंके साथ-साथ बने रहनेका नहीं, बल्कि साहित्यिक प्रकारकी शिक्षामें — जो अब स्वराज्यके युगमें पुरानी होकर बिलकुल निरुपयोगी हो गयी है — सुधार करनेका है। यह शिक्षा अेक वर्ग तक ही सीमित रही है; अुसके परिणाम जनता तक पहुंचे ही नहीं हैं। अगर हम अपने देशमें सच्ची जनतांत्रिक समाज-रचना खड़ी करना चाहते हों, तो यह अवस्था जितनी जल्दी संभव हो बदलनी चाहिये।

'अमृत बाजार पत्रिका' अपने अुक्त लेखमें अेक दूसरी बात भी कहती है, जो अुपयुक्त और ध्यान देने योग्य है। वह कहती है:

> "बुनियादी शिक्षाकी कल्पनाका स्पष्टीकरण करते हुअे श्री श्रीमन्नारायण और श्री के० जी० सैयदेन अपने निवेदनमें कहते हैं कि 'महात्मा गांधीने बुनियादी शिक्षाकी जो कल्पना की है और अुसे जैसा समझाया है, अुसके अनुसार बुनियादी शिक्षा जीवनकी शिक्षा और अिससे भी अधिक जीवनके द्वारा दी जानेवाली शिक्षा है। अुसका ध्येय अैसी समाज-व्यवस्था कायम करना है, जो शोषण और हिंसासे मुक्त हो।'"

अुक्त कथनको अुद्धृत करके 'पत्रिका' प्रश्न करती है:

"लेकिन सवाल यह है कि बुनियादी शिक्षा जिस समाज-रचनाको पैदा करना चाहती है, और द्वितीय पंचवार्षिक योजना भारी अुद्योगों पर जोर देकर जिस समाज-योजनाकी कल्पना कर रही है, वे दोनों क्या अेक ही वस्तु हैं या अेक-दूसरेसे बहुत भिन्न हैं?"

'पत्रिका' जोर देकर कहती है:

"बुनियादी शिक्षा जिस समाज-रचनाके साथ संगत है, वह देशमें मौजूद नहीं है। केन्द्रीय और राज्य-सरकारों द्वारा चलायी जा रही सामाजिक और आर्थिक नीतियोंकी परवाह न करते हुअे बुनियादी शिक्षा अपने बल पर नयी समाज-रचनाका निर्माण कर ले, अैसा नहीं हो सकता।"

'अ० बा० पत्रिका' का यह कथन द्वितीय पंचवार्षिक योजनाके अेक अैसे दोषको स्पष्ट करता है जिसकी चर्चा अिस पत्रमें अकसर की गयी है। यह मानना ही होगा कि नयी योजना भारी अुद्योगों पर अनुचित जोर देती है। लेकिन यह नहीं माना जा सकता कि वह छोटे अुद्योगोंकी अुपेक्षा करती है। देशके अुद्योगीकरणकी योजनामें छोटे पैमानेके अुद्योगोंको भी स्थान दिया गया है और अुन्हें योजनाका अविच्छेद्य अंग माना गया है। और अगर हम यह याद रखें कि भारी अुद्योगोंमें चंद लोगोंको ही काम मिलता है, जब कि छोटे पैमानेवाले अुद्योग सचमुच जनताके अुद्योग हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि देशकी अर्थरचनामें अुनका कैसा महत्त्वपूर्ण स्थान है।

फिर, यह कहना भी सही नहीं है कि ये अुद्योग, — यद्यपि अर्थशास्त्रमें अुन्हें छोटे पैमानेके अुद्योग कहा जाता है — मानो देशमें हैं ही नहीं या नगण्य हैं। सच तो यह है कि जहां बड़े पैमानेवाले अुद्योग राष्ट्रकी वार्षिक आयमें ५५० करोड़ रुपये ही देते हैं, वहां खेती और छोटे पैमानेवाले अुद्योग क्रमशः ४८०० और ९०० करोड़ रुपये देते हैं। अिसलिअे भारतमें सचमुच तो छोटे पैमानेवाले अुद्योगोंकी अर्थरचना ही चल रही है, यद्यपि यह भी सही है कि अुनकी अुपेक्षा होती है और अुनके महत्त्वके बारेमें बहुत अज्ञान है। अिन अुद्योगोंमें खेती और ग्रामोद्योग आज भी हमारे देशके प्रमुख अुद्योग हैं। बुनियादी शिक्षा हमारे जीवनके अिस बड़े सत्यको पहिचान कर अुसे राष्ट्रके जीवनमें अेक सजीव और सक्रिय प्रभावकी तरह पुनः स्थापित करना चाहती है। यह प्रयत्न द्विमुखी होना चाहिये: अेक ओर तो हमारी आर्थिक नीतिका निर्धारण अिस अुद्देश्यसे किया जाना चाहिये कि ये ग्रामोद्योग, जिन पर हमारी ७०% जनताकी जीविका चलती है, ज्यादा सही टेकनिकल और आर्थिक आधार पर खड़े कर दिये जायं। दूसरी ओर, हमारी शिक्षाको हमारे जीवनके अिस बुनियादी सत्यके अनुसार ही अपने रूप और अपनी दिशाका परिवर्तन करके देहाती भारतकी सेवामें लग जाना चाहिये, क्योंकि देहाती भारत ही सच्चा भारत है। शहरी अिलाकोंकी छोटी जरूरतोंका योजनाके अिस बृहत्तर पहलूके साथ आसानीसे मेल कर दिया जा सकता है। याद रखना चाहिये कि आखिर तो वे समूची योजनाका अेक अंग ही हैं और सारा ध्यान अुन पर ही केन्द्रित नहीं किया जा सकता। यह हमारे देशका दुर्भाग्य है कि यह गलती अभी भी चलने दी जा रही है। समय आ गया है कि हम अुसे दूर कर दें। अिस दिशामें हमारे प्रयत्नोंका आरंभ नयी तालीमकी विस्तृत आधारवाली नीतिके जरिये होना चाहिये और अिस नीतिको नयी अर्थयोजनाकी — जो अब यह महसूस करने लगी है कि खेती और छोटे पैमानेवाले अुद्योग अुसके अभिन्न अंग हैं — आवश्यकताओंके साथ संयोजित करना चाहिये।

२७-७-'५५ **मगनभाई देसाई**

(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

कानपुरकी हड़ताल

कानपुरमें मिल-मजदूरोंकी हड़तालका लगभग दो मास बाद अन्त आ गया, यह आनन्दकी बात है। अिस हड़तालके बारेमें देशमें, अखबारोंमें, सरकारके मंत्रालयोंमें और मंत्रि-मंडलमें काफी चर्चा हुअी, खलबली मची और अशान्ति रही। और यह सब होना स्वाभाविक भी है। क्योंकि लाखों रुपयेका कपड़ा बनना बन्द हो जाने पर, अुससे व्यक्तिगत मुनाफा और सरकारी जकात मिलना बन्द होने पर और राजनीतिक क्षेत्रमें काम करनेवाले मजदूर नेताओंके मौजूद रहने पर अैसा न हो तो ही आश्चर्यकी बात कही जायगी।

परन्तु अिस प्रकरणमें भी यह बात विचारने जैसी है कि अिस हड़तालमें कितने आदमी बेकार बने होंगे? मैं मानता हूं कि कुछ हजार तो होंगे। अितनेसे लोगोंकी बेकारी अितना बड़ा ऊहापोह जगा सकती है, यह कैसी शक्ति कही जायगी?

अब ध्यानके बाहर रहनेवाला अेक दूसरा पहलू देखें। देशमें कितने लोग बेकार और बेहाल हैं? कितने करोड़का सच्चा धन वे पैदा कर सकते हैं? कानपुरके मजदूरोंसे सैकड़ों गुने ज्यादा लोग अिस देशमें बेकार हैं। और वे मास-दो माससे नहीं, बल्कि बरसोंसे बेकार हैं! फिर भी अुनकी बेकारी दूर करनेके लिअे कुछ नहीं किया जाता। यह कैसी बात है? अिस बारेमें अितनी अुपेक्षा क्यों? और कानपुरके प्रकरणमें अितना ऊहापोह क्यों?

अिस प्रश्नका अुत्तर देशकी जनताको और सरकारको भी सोचना चाहिये। आज तो अैसी दुःखद स्थिति है कि यह प्रश्न अूपर बताये गये रूपमें मुश्किलसे किसीको सूझता या किसीके मनमें अुठता है। परन्तु देशमें हमें यदि लोकशाहीकी स्थापना करनी है, तो समय रहते अिसका विचार किये बिना छुटकारा नहीं है।

अिसका अेक अुत्तर तो साफ है। वह यह कि अेक दल संगठित है और यंत्रोद्योगमें काम करता है, जिसे सरकार, धनिक लोग, पढ़े-लिखे और सत्ताधारी वर्ग — जिनकी आज देशमें चलती है — चाहते हैं और पसन्द करते हैं। गांवोंमें अिधर-अुधर बिखरे हुअे लाखों बेकार न तो संगठित हैं और न अुनके मृतवत् काम-धन्धेके लिअे किसीको कोअी परवाह या चिन्ता है।

यह स्थिति देशके लिअे भयंकर कही जायगी। भारतका सबसे बड़ा और सबसे पहला प्रश्न बेकारी-निवारणका है। अिस प्रश्नकी यह कीमत पंचवर्षीय योजना भी नहीं करती यह बड़े दुःखकी बात है।

वह दिन कब आयेगा जब देशके बेकार लोगोंकी संख्या हमारे राज-कारोबार और अुसकी योजनाकी सत्यताकी कसौटी मानी जायगी? अुसके बिना यह नहीं कहा जा सकता कि हमारे देशमें गरीबोंका राज्य है।

२७-७-'५५ **मगनभाई देसाई**

(गुजरातीसे)

हमारा नया प्रकाशन

सर्वोदय

लेखक: **गांधीजी**; संपा० **भारतन् कुमारप्पा**

गांधीजीके मतानुसार सर्वोदयका अर्थ आदर्श समाज-व्यवस्था है। अिस पुस्तकमें सर्वोदयकी चर्चा की गअी है और यह बताया गया है कि वह कैसे सिद्ध किया जा सकता है। अिसका अुद्देश्य संसारके सामने गांधीजीका शांति और स्वतंत्रताका सन्देश पेश करना है।

कीमत २-८-० डाकखर्च ०-१२-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-१४

सार्ववर्णिक धर्म

[ता० ११-६-'५५ को कुटारागुड़ा पड़ाव (कोरापुट — अुत्कल) पर दिये गये प्रवचनसे।]

सब लोगोंको मालूम है कि हम लोगोंमें चार आश्रम और चार वर्ण बने हैं। अलग-अलग वर्णके और अलग-अलग आश्रमोंके धर्म भी अलग-अलग बताये गये हैं। परंतु अुन सब आश्रमों और वर्णोंके लिअे अेक समान धर्म भी बताया है। आजकल हम अुसीको मानव-धर्म कहते हैं। शास्त्रकारोंने कहा है कि — "धर्मोऽयं सार्ववर्णिकः"। अिसका अर्थ है सब वर्णोंके लिअे और सब आश्रमोंके लिअे अेक समान धर्म है। अुसमें अुन्होंने कुछ बातें अैसी बताअी हैं जो हरअेकको करनी चाहिये और हर हालतमें करनी चाहिये। अुसमें से आज मैं सब बातें तो नहीं बताअूंगा, सिर्फ अेक ही बताअूंगा। यह अेक अच्छा चिन्तनका विषय है।

"भूतप्रिय हितेहा च धर्मोऽयं सार्ववर्णिकः" सब भूतोंका हित करना और सब भूतोंका प्रिय करना, यह है सब वर्णोंका धर्म। भूतोंका अेक हित होता है और अेक प्रिय होता है। अिसलिअे हितकी भी बात करनी चाहिये और प्रियकी बात भी करनी चाहिये। कुछ बातें सबको प्रिय होती हैं। भूखे मनुष्यको खाना प्रिय है, प्यासेको पानी प्रिय है, जो थका हुआ है अुसे निद्रा प्रिय है, जो दुःखी है अुसे दुःख-निवारण प्रिय है। यह सारे काम सबको प्रिय हैं। अैसा कोअी भी शख्स नहीं है जिसे खाना प्रिय नहीं है, क्योंकि सबको भूख लगती है। अैसा कोअी भी शख्स नहीं है जिसे दुःख-निवारण प्रिय नहीं है, क्योंकि सबको दुःख खराब मालूम होता है। अिसलिअे जो चीजें सबको प्रिय हैं, अुनको बढ़ाना चाहिये। अुनके वास्ते मेहनत करनी चाहिये। अिस तरह समाजके प्रियके लिअे भूखोंको खाना मिले, बीमारोंका रोग-निवारण हो, अैसी कोशिश करनी चाहिये। यह काम सबको प्रिय होता है।

मान लीजिये किसीको आम खाना प्रिय है और हम अुसे आम देते हैं। वह जरूरतसे ज्यादा खाता है तो अुसे रोकना जरूरी है। वह हमारा धर्म है। भूखेको खाना प्रिय है अिसलिअे भूखेको खाना मिले, अैसी योजना करना हमारा धर्म है। लेकिन वह जरूरतसे ज्यादा खाना चाहेगा तो अुसके हितके लिअे अुसे रोकना जरूरी है। अिस तरह प्रियसे भिन्न वस्तु है हित। हमें समाजका हित भी करना चाहिये और प्रिय भी करना चाहिये।

यह धर्म किसी अेक जातिके लिअे, किसी अेक वर्णके लिअे, किसी अेक पंथके लिअे नहीं है। यह सबके लिअे है। अिस धर्मका अगर लोप हुआ, तो सब धर्मोंका लोप हो जायगा और सब पंथोंका लोप हो जायेगा। समाज-प्रिय और समाज-हितकी प्रेरणा अगर मिट गअी, तो हिन्दू धर्म भी मिट गया, अिस्लाम धर्म भी मिट गया, अीसाअी धर्म भी मिट गया, सब धर्म ही मिट गये। फिर ब्राह्मणका भी लोप हुआ, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबका लोप हुआ। फिर ब्रह्मचर्य आश्रम क्षीण हुआ, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम, संन्यास आश्रम सब क्षीण हुअे। कहनेका तात्पर्य यह है कि मनुष्य जिस किसी हालतमें हो, जिस किसी धर्मका कहलाता हो, जिस किसी पंथमें हो, अुसके लिअे समाज-हित और समाज-प्रिय करनेकी वृत्ति रखना बहुत जरूरी है।

जहां पर कोअी भूतप्रिय और भूतहितकी बात शुरू करता है, वहां पर समाजको वह अच्छी लगती है। दूसरे काम किसीको अच्छे लगते हैं, तो किसीको बुरे लगते हैं। लेकिन बीमारकी सेवाका कोअी काम निकलता है तो सबको अच्छा लगता है। किसीका घर जल रहा हो और अुसे बुझानेको जाना हो तो सबको अच्छा लगता है। अिसके मानी यह हैं कि जहां समाज-कल्याणकी बात चलती है, जिसमें समाजका हित और समाजका प्रिय दोनों आता

www.vinoba.in

है, वहां सबको अच्छा लगता है। हमने देखा है कि जबसे भूदान-यज्ञका काम निकला है, जिसमें लोगोंको खुद होकर अपनी संपत्तिका छठा हिस्सा देनेके लिअे कहा जाता है, वह काम सबको अच्छा लगता है। जो भूमि-हीन हैं अुनको भूमि मिलती है। अिसलिअे अुनको यह काम अच्छा लगता हो तो कोअी आश्चर्यकी बात नहीं है। लेकिन जिनसे भूमि देनेकी बात कही जाती है, अुन्हें भी यह काम अच्छा लगता है। हां, यह होता है कि किसीको कभी मोहके कारण भूमि देना कठिन मालूम होता है या कुछ मुश्किल होती है, अिसलिअे अेकदमसे कोअी नहीं दे सकता है। परंतु जब देनेकी बात होती है तो वह कहता है कि यह कल्याणकी बात है। चार सालसे हम लगातार घूम रहे हैं। कअी लोगोंसे बात करनेका मौका हमें मिलता है। हमें आज तक कोअी भी शख्स अैसा नहीं मिला जिसे अिस यज्ञसे अन्तःसमाधान न हुआ हो। हां, कुछ लोग यह कहते हैं कि अिससे क्या होगा? अिससे दारिद्र्य कैसे मिटेगा? कुछ लोग कहते हैं कि आप जमीन मांगते हैं तो थोड़ी-थोड़ी मिलती है, लेकिन जितनी चाहिये अुतनी नहीं मिलती। लेकिन फिर भी जितना काम होता है अुससे हरअेकके हृदयको तसल्ली होती है।

धर्मकी यह अेक कसौटी है, पहचान है कि वह सबको अच्छा लगता है। "हृदयेन अभ्यनुज्ञातः" — जिसे हृदयकी अनुज्ञा मिलती है, सम्मति मिलती है वह धर्म है। यह सार्वभौम कसौटी है, अर्थात् हर धर्मको लागू होती है। अिसलिअे भूदान-यज्ञमें जबसे पूराका पूरा ग्राम-दान देनेकी बात चली है, तो वह हृदयको अच्छी लगती है और अुसे अन्दरसे संमति मिलती है। अिसलिअे फलानी चीज धर्म है या धर्म नहीं है, यह वेदोंमें देखनेकी जरूरत नहीं, पुस्तकोंमें देखनेकी जरूरत नहीं है। सिर्फ यह सवाल पूछा जाय कि फलाना काम करनेमें हृदयकी अनुज्ञा है या नहीं? अुससे हृदयको संतोष मिलता है या नहीं? अगर हृदयको संतोष मिलता है तो वह धर्म है। यहां पर हम किसी अेक मनुष्यके हृदयकी बात नहीं करते हैं। सारे समाजके हृदयकी बात करते हैं।

विनोबा

अुड़ीसामें विनोबा — ८

कोरापुट जिलेके ग्राम-दानके पराक्रमने विनोबाजीको रोक लिया। आगेका सारा कार्यक्रम रद्द करके अुन्होंने अिसी जिलेमें और दो महीने घूमनेका निश्चय किया है। यहां पर बारिश बहुत होती है। विनोबाजीने कार्यकर्ताओंसे कहा, "जितने जोरोंसे वर्षा होगी अुतनी ही दानकी वर्षा भी होनी चाहिये।"

जयपुरकी विशाल प्रार्थना-सभामें भूदानकी वैचारिक पृष्ठ-भूमिको समझाते हुअे विनोबाने कहा, "स्वराज्य-प्राप्तिके बाद शक्तिका अधिष्ठान राजनीति नहीं हो सकती है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र ही हो सकता है। अब सामाजिक और आर्थिक आजादी प्राप्त करनेके कार्यक्रममें ही शक्तिका स्रोत है। गांधीजीने देशको भय छोड़नेका पाठ पढ़ाया। अब भूदानके जरिये लोभ छोड़नेका पाठ पढ़ाया जा रहा है। जिस देशके जवानोंके सामने त्याग और तपस्याका मौका है, अुनसे बढ़कर भाग्यवान् दूसरा कोअी नहीं। भूदान-यज्ञमें से अब अेक यज्ञपुरुष पैदा हुआ है, जो राष्ट्रको कहता है कि अपनी जमीन और संपत्तिका छठा हिस्सा दीजिये।"

प्रार्थना-सभाके पश्चात् कालेजके विद्यार्थी विनोबाजीसे मिलने आये। अुन्होंने कुछ प्रश्न पूछे। पहला प्रश्न था: "आपने कहा है कि आपका अन्तिम अुद्देश्य शासन-मुक्त समाजकी स्थापना है। लेकिन यहां पर सरकार आपके कामको पूरी मदद देती हुअी दिखाअी देती है। यह क्यों?"

विनोबाजीने जवाब दिया, "हमारा अन्तिम अुद्देश्य मोक्ष या देह-मुक्ति माना जाता है। परंतु वह देह-मुक्ति अिस देहमें ही हासिल होती है। कुल्हाड़ीका डंडा लकड़ीका होता है और अुसी कुल्हाड़ीसे पेड़ोंको काटते हैं। वैसे ही अच्छी सरकार यह चाहेगी कि अच्छे ढंगसे सरकार ही मिट जाय और जनता अपने पैरों पर खड़ी हो जाय। जैसे माता-पिता चाहते हैं कि बच्चे अपने पैरों पर खड़े हो जायं। अिसलिअे सरकार अैसे काममें मदद करती है, तो लेनेमें कोअी हर्ज नहीं है। लेकिन अगर हमारे पास कुल्हाड़ी नहीं होती और सिर्फ डंडा होता तो काम नहीं चलता। हमारे पास जो कुल्हाड़ी है, वह दूसरी ही है। आन्दोलन चलता है तो कार्यकर्ताओंके त्यागसे चलता है। हिन्दुस्तानमें सैकड़ों कार्यकर्ता घर-बार छोड़कर, त्याग करके, गांव-गांव घूमते हैं। अब सरकार अिस काममें थोड़ी मदद देती है तो हम ले सकते हैं।"

दूसरा प्रश्न यह था — "सर्वोदय समाजके सदस्य बननेके लिअे किन चीजोंकी जरूरत है?"

विनोबाजीने जवाब दिया, "यह अेक बड़ा विषय है। लेकिन मैं थोड़ेमें समझाअूंगा। सर्वोदय समाजमें सबसे बड़ी बात यह है कि दूसरोंका भला पहले हो। पहले दूसरोंको खाना मिले और पीछे मुझे मिले, यह वृत्ति सर्वोदयकी वृत्ति है। सर्वोदयका मतलब है सबका अुदय। तो अुसमें मेरा भी अुदय आयेगा ही। पर हरअेकको चाहिये कि अपनी बात पीछे रखे और दूसरोंकी बात आगे रखे। टिकट आफिसके पास सबकी यह वृत्ति होती है कि सबसे पहले मुझे टिकट मिले। यह सर्वोदयका रास्ता नहीं, सर्वनाशका रास्ता है। यह मत समझिये कि सर्वोदयकी वृत्ति मनुष्यके लिअे कठिन है। बल्कि यह तो मनुष्यके लिअे बिलकुल सहज है। परंतु आज हम मानवताको भूल गये हैं। हड्डीका टुकड़ा देखते ही दो-चार कुत्ते अुस पर टूट पड़ते हैं, हर कोअी सोचता है कि पहले मुझे मिले। अगर मनुष्य भी अिसी तरहसे सोचेगा तो वह मनुष्य नहीं रहेगा, जानवर बनेगा। सर्वोदयकी अच्छी मिसाल है घरकी माता, जो दूसरोंको खिलाकर फिर खाती है। हम चाहते हैं गांव-गांवमें जो मुखिया हैं अुनके मनमें यही विचार पैदा हो। जिस गांवमें हर कोअी दूसरेकी चिन्ता करेगा वहां पर सब प्रेमसे खायेंगे।"

तीसरा प्रश्न यह था कि त्याग बड़ा है या भगवद्भक्ति? और संसारमें सुखी कौन है?

विनोबाजीने कहा, "अिस प्रश्नका मतलब यह है कि खराब वस्तुका द्वेष बड़ा या अच्छी वस्तुका अनुराग? अिसका अुत्तर यह दिया जा सकता है कि दोनों मिलकर अेक ही वस्तु है। जो परमेश्वर पर प्रेम रखता है वह स्वाभाविक ही विषयासक्तिका त्याग करता है। अिसलिअे अीश्वर-अनुरागसे सहज ही विषयोंके प्रति वैराग्य पैदा होता है। अिससे अुल्टे जिसके मनमें वैराग्य पैदा हुआ, वह स्वाभाविक भावसे ही आत्मा और भक्तिकी तरफ जाता है। अिस तरह ये दोनों बातें रात और दिनके जैसी अेकके बाद दूसरी आनेवाली हैं। अिसमें से हरअेकको अपनी-अपनी प्रवृत्तिके अनुसार पहले दोमें से किसी अेककी प्रेरणा मिलेगी। अब यह पूछा जा सकता है कि अिन दोनोंमें आसान कौन है? अगर अीश्वर पर श्रद्धा है, पहलेसे ही कुल-संस्कार या दूसरे कुछ कारणोंसे अीश्वर-अनुराग मनमें पैदा हुआ हो तो सहज ही काम बन जाता है, अैसा भक्त लोग मानते हैं। मैं भी मानता हूं कि अीश्वर-अनुरागसे विषय-त्याग सहज होता है। लेकिन अीश्वर-अनुराग अुन्हींके मनमें पैदा होता है जिनका पूर्व जन्मका या अिस जन्मका कर्म अच्छा हो या जिन्हें सत्संगति मिली हो या कोअी ठेस लगी हो। अीश्वर-अनुराग

www.vinoba.in

प्राप्त होनेके बाद मामला आसान है। परंतु ओश्वर-अनुराग प्राप्त होना कठिन है। अिस तरहसे ये दोनों परस्परावलम्बी हैं। जैसे बीजसे फल और फलसे बीज पैदा होता है, अुसी तरह ओश्वर-अनुरागसे वैराग्य और वैराग्यसे ओश्वर-अनुराग बढ़ता है। यह दोनों मिलकर अेक ही चीज हैं, सिर्फ दो अलग-अलग अनुप्रवेश (अॅप्रोच) हैं, अेक सिक्केकी दो बाजू हैं। दुनियामें सुखी वह है जो अपना सुख नहीं चाहता है, दुनियाका सुख चाहता है। हम अगर अपनी छायाके पीछे-पीछे जानेकी कोशिश करेंगे तो छाया दूर भाग जायगी। परंतु हम छायाकी परवाह न करते हुअे आगे बढ़ेंगे, तो छाया पीछे-पीछे आयेगी ही। वैसे ही जो अपना सुख नहीं चाहता है, अुसे सुख मिलता है और जो अपना सुख चाहता है अुसे सुख नहीं मिलता है। हम आपके सामने अपना अनुभव रखते हैं। जो सुखकी अिच्छा नहीं रखता है, अुसीके गलेमें सुख आकर पड़ता है। जैसे लक्ष्मीको न चाहनेवाले भगवान् विष्णुके गलेमें ही लक्ष्मी वरमाला डालती है।"

कोरापुटकी सभामें भूदान-कार्य व सरकारी कानूनके बारेमें समझाते हुअे विनोबाजीने कहा, "सरकार जमीन छीन सकती है, परंतु प्रेम नहीं पैदा कर सकती। भूदान-यज्ञके जरिये न सिर्फ जमीनका बंटवारा हो रहा है, बल्कि समाजमें प्रेमभाव पैदा करके समाजको अेकरस बनानेका काम हो रहा है। हम तो जिससे जमीन मांगते हैं, अुससे कहते हैं कि बैल भी दीजिये, संपत्ति भी दीजिये और अन्य साधन भी दीजिये। क्या सरकार कानूनसे जमीन छीनने पर बैल भी मांग सकती है? अुल्टे सरकारको ही जमीनवालोंको मुआवजा देना पड़ता है। बिहारके पूर्णिया जिलेसे श्री वैद्यनाथ चौधरीने हमें अपने बंटवारेके अनुभव लिखे हैं। वे लिखते हैं कि किसी गांवमें जमीनका बंटवारा करनेके बाद अुन्होंने सभासे कहा कि गरीबोंको जमीन तो मिल गयी, लेकिन अब बैल दोगे या नहीं? अिस पर जितने बैलोंकी जरूरत थी अुतने मिल गये। अिसलिअे भूदानका काम दिलोंको जोड़नेका काम है, हृदय-शुद्धिका काम है, धर्म-प्रतिष्ठाका काम है। हम चाहते हैं कि हर व्यक्ति अपने पास जो कुछ है — जमीन, संपत्ति, श्रमशक्ति, विद्या — अुसका अेक हिस्सा समाजको अर्पण करे। अिस तरह देशमें दानकी परंपरा चली, तो आप देखेंगे कि सारा हिन्दुस्तान सुखी होगा। आप बाबाकी मांग कबूल कीजिये और फिर भी अगर देश सुखी नहीं हुआ, तो बाबाको फांसी पर लटका दीजिये।"

रेवापल्लीकी सभामें संग्रह और चोरीका कार्यकारण संबंध समझाते हुअे विनोबाजीने कहा, "आज कुछ लोग जमीनके मालिक बन बैठे हैं। अिसलिअे जो भूमि-हीन हैं, भूखे हैं, वे कभी-कभी परिस्थितिवश चोरी कर लेते हैं। आज तो चोरी करनेवालेको न्यायाधीश तीन सालकी सजा देता है। लेकिन वास्तवमें सजा भुगतनी पड़ती है चोरी करनेवालेके बीवी-बच्चोंको। क्योंकि वह तो जेलमें जाता है, अिसलिअे अुसको खाना मिल जाता है। लेकिन अुसके बीवी-बच्चे भूखे मरते हैं। अगर हमको न्यायाधीश बनाया जाय, तो हम अुस चोरको तीन अेकड़ जमीन देंगे और कहेंगे कि अुस पर काम करके अपने बाल-बच्चोंका पालन-पोषण करो।"

गत सप्ताहमें दो तारीखको प्रसिद्ध समाजवादी नेता श्री अशोक मेहता विनोबाजीसे मिलने आये थे। अुन्होंने पंचवर्षीय योजना, भूमि-समस्या तथा अन्य महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की। चौरी-गुमांमें रामगढ़के राजासाहब, जिन्होंने स्वयं अेक लाख अेकड़का दान दिया था और जो भूदान-कार्यमें लगे हुअे हैं, विनोबाजीसे मिलने आये थे और दो दिन तक यात्रामें साथ रहे।

कोरापुट जिलेमें अब तक करीब पौने दो सौ गांव मिले हैं। और पूरे अुड़ीसामें तीन सौ से अधिक गांव मिले हैं।

७–७–'५५ नि० दे०

१५ वीं अगस्तके अुत्सवका आयोजन — अेक सूचना

[मद्राससे प्रकाशित होनेवाले 'वेदान्त केसरी' के जून, १९५५ के अंकमें 'भारतके शासकोंको १५ वीं अगस्तकी चुनौती' शीर्षक अेक सम्पादकीय टिप्पणी प्रकाशित हुअी है। नीचे अुसका सारांश दिया जा रहा है।]

अस्पृश्यताको अपराध करार देनेवाला विधेयक १ जून, १९५५से हमारे देशका प्रचलित कानून बन गया है। भारतकी सामाजिक प्रगतिकी यात्रामें यह घटना अेक महत्त्वपूर्ण मंजिलकी सूचक है।

अब सवाल यह है कि अुक्त कानूनके द्वारा हम हासिल क्या करना चाहते हैं? अुत्तर होगा — सामाजिक समानता। सामाजिक समानताका मतलब क्या है? क्या अुसका यह मतलब है कि केलाराम जो अभी हमारे सामने बंडी बाजारकी सड़क पर झाड़ू लगा रहा है राष्ट्रपति भवनकी तरफ दौड़ा जायगा और वहां डा० राजेन्द्रप्रसादको अेक ओर हटाकर राज्यके कागजों पर अुनकी जगह खुद हस्ताक्षर करने लगेगा? जाहिर है कि यह पागलपन होगा और समानताका यह अर्थ नहीं है। कम्युनिस्ट भी दुनियामें अिस तरहकी समानता नहीं चाहते। तो फिर समानता है किस बातमें? समानता हम जिस चीजको प्रकाशित करते हैं अुसमें नहीं है, जिसका प्रतिनिधित्व करते हैं अुसमें है। अर्थात् हमें मनःपूर्वक मनुष्यकी बुनियादी समानता स्वीकार करना है और अुसीके अनुसार आचरण करना है। स्वामी विवेकानन्दके शब्दोंमें कहें तो:

> "सामाजिक जीवनमें मैं अेक काम करनेकी योग्यता रखता हूं, तुम कोअी दूसरा काम करनेकी योग्यता रखते हो। तुम देशका शासन कर सकते हो, मैं पुराने जूतोंकी मरम्मत कर सकता हूं। लेकिन अिससे यह सिद्ध नहीं होता कि तुम मुझसे बड़े हो, कारण तुम मेरे जूतोंकी मरम्मत नहीं कर सकते। मैं देशका शासन नहीं कर सकता तो तुम जूतोंकी मरम्मत नहीं कर सकते। मैं जूतोंकी मरम्मत करनेमें कुशल हूं, तुम वेदोंको पढ़ और समझ सकते हो, लेकिन यह कोअी कारण नहीं कि तुम मेरे सिर पर पांव रखो।"

अब हमें कानूनोंकी नहीं, विधायक सामाजिक कार्यकी जरूरत है। कानूनकी हमें अुतनी जरूरत नहीं है जितनी प्रेमकी और अुस प्रेमको समाजमें सींचनेकी है।

आजके भारतमें केवल दो सफल शिक्षाकार हैं। सफल राजनीतिक कार्यकर्ता पहला, और सफल फिल्म अभिनेता दूसरा। आये दिन अखबार अिन दोनोंके चित्रोंसे भरे रहते हैं। आजकल अेक ही स्मृतिका वाचन होता है — दैनिक पत्रका। सामाजिक आचरण कैसा होना चाहिये, अिस बातका पाठ लोग मनु, याज्ञवल्क्य, पाराशर या वसिष्ठसे नहीं सीखते, बल्कि अुक्त दोनोंसे ही सीखते हैं। फिल्मका अभिनेता तो अपने विशिष्ट माया-जगत्में रहता है, जहां अुसके पास पहुंचना आसान नहीं है। अिसलिअे अिस युगमें शासकोंको ही शिक्षक बनना पड़ेगा। अुनका कर्तव्य है कि प्रत्येक महत्त्वपूर्ण बातमें अपने जीवन और आचरणके जरिये अनुकरणीय अुदाहरण पेश करें।

लेकिन हमारी सरकारें क्या कर रही हैं? वे भेदभावके पुराने विभाजन कायम रख रही हैं और नये निर्माण कर रही हैं। हम यह नहीं कहना चाहते कि नौकरियोंके संघटन और सचिवालयोंमें अिस तरहके विभाजन हमेशा हटाये ही जा सकते हैं। लेकिन जब हम समानताकी अितनी बात करते हैं, तो फिर अुन्हें सामाजिक समारोहोंमें क्यों रखना चाहिये? सामाजिक समारोहोंमें भी हम जिस चीजका प्रकाशन करते हैं अुसके मानके अनुसार चल रहे हैं, जिसका प्रतिनिधित्व करते हैं अुसके अनुसार नहीं। और अिस तरह देशमें सरकारकी बनायी हुअी अेक नयी जाति-प्रथाका आरम्भ हो रहा है, जो कि रूप पकड़ जानेके बाद अुतनी ही मजबूत और दुःखदायी हो जायगी जितनी पुरानी।

www.vinoba.in

हमें गंभीरतापूर्वक महसूस होता है कि १५वीं अगस्त जैसे बड़े राष्ट्रीय पर्वका हमें कुछ बेहतर सामाजिक अुपयोग कर सकना चाहिये। अिस दृष्टिसे हम यहां अेक विचार पेश करते हैं जो साथ ही हमारे देशके नयी दिल्ली तथा विविध प्रान्तोंकी राजधानियोंमें रहनेवाले शासकोंके लिअे चुनौती रूप है।

अगली १५ अगस्तसे, प्रतिवर्ष अिस दिन राष्ट्रपति राष्ट्रपति-भवनमें और विविध प्रान्तोंके राज्यपाल अपने-अपने राजभवनमें अेक विशेष सामाजिक समारोहका आयोजन करें, जिसमें हमारे देशके 'अतिशय सम्मानार्ह' व्यक्तियोंको निमंत्रित किया जाय। ये अतिशय सम्मानार्ह व्यक्ति कौन हैं? ये हैं गलियों, सड़कों, टट्टियों और शहरोंके बाहरी स्वच्छ रूपके पीछे छिपी हुअी भयंकर गंदी नालियोंको साफ करनेवाले जनताके महान् सेवक, जिनकी अश्रान्त सेवाओंके बिना हमारे राज्यकी गाड़ी अेक दिन भी नहीं चल सकती।

तो अिन लोगोंको निमंत्रित किया जाय और फिर अुन्हें भोजन कराया जाय। भोजनके पदार्थों और परोसनेके ढंगमें कोअी विदेशीपन नहीं होना जाहिये। पहले भोजनमें अुनकी पसंदगी जान लेना चाहिये। अुनकी रुचिके अनुसार ही भोजन बनना चाहिये। पंक्तिकी व्यवस्था भारतीय ढंगसे जमीन पर की जाय और भोजन पत्तलोंमें परोसा जाय। कुर्सी-टेबलोंका वहां कोअी काम नहीं है। कुर्सी-टेबलें होंगी तो अुन्हें अटपटा लगेगा।

जिन लोगोंने अुक्त कानूनके पक्षमें मत देकर अुसे पास कराया है, अैसे कुछ लोगोंको भी पंगतमें अिन 'अतिशय सम्मानार्ह' भाअियोंके साथ बैठकर खाना चाहिये। अिन लोगोंको अेकसाथ विधान-सभा-सदस्योंका अेक अलग वर्ग बनाकर नहीं, यहां-वहां बिखरकर बैठना चाहिये।

अब परोसनेका काम कौन करेगा? परोसनेका काम करेंगे राजेन्द्रप्रसाद, राधाकृष्णन्, जवाहरलाल, सारे मंत्री, अुपमंत्री, संसद् और दूसरी विधान-सभाओंके सदस्य और बड़े-बड़े सरकारी अधिकारी। गरज यह कि हरअेकको अिस कामको करने और अुसे करके कृतार्थ महसूस करनेका मौका मिलना चाहिये।

फिर कुछ लोगोंको घूम-फिरकर देखना चाहिये कि किसीको कोअी चीज और तो नहीं चाहिये। परोसते हुअे जैसा कि पंगतोंमें होता है परोसनेवालोंकी आपसमें कुछ डांट-डपट भी चलना चाहिये, ताकि खानेवालोंको लगे कि अुन्हें ध्यानपूर्वक खिलाया जा रहा है। वातावरण अनौपचारिक ढंगका होना चाहिये, बड़े सरकारी कर्मचारियोंके काम जिस तरह अिशारोंमें हुआ करते हैं, वैसा नहीं होना चाहिये। भारतीय ज्यौनारोंमें जिस तरह यजमान निमंत्रितोंकी चिन्ता करता हुआ दिखाअी देता है, वैसा ही होना चाहिये।

और भोजनके बाद पत्तलें कौन अुठायगा, जूठन कौन साफ करेगा? कृपया अैसा न करें कि जिन्हें आपने अभी अभी सम्मानपूर्वक खिलाया-पिलाया है अुन्हींसे यह काम करनेको कह दिया जाय। अिससे तो आपका किया-कराया सब मिट्टीमें मिल जायगा। तो फिर यह काम कौन करेगा? अिस कामको भी राजेन्द्रप्रसाद, राधाकृष्णन्, जवाहरलाल करेंगे। और अुसमें अुनका हाथ बंटायेंगे मंत्री, अुपमंत्री, संसद्के सदस्य और सरकारके दूसरे वरिष्ठ अधिकारी।

आप अगर भारतमें समानताकी स्थापना सचमुच करना चाहते हैं तो यह काम कीजिये और फिर देखिये कि भाअीचारेके ज्वारके सामने युगों-पुरानी सामाजिक दीवारें कैसी गिरती हैं और हमारे राष्ट्रीय जीवनमें नयी चेतनाकी कैसी वेगपूर्ण लहर अुठ खड़ी होती है।

अिस कार्यक्रमके पीछे बुनियादी विचार यह है कि देशके अूंचे-से-अूंचे लोगोंको झुककर आदरपूर्वक नीचे-से-नीचे लोगोंसे मिलना चाहिये। राज्यके प्रमुखको मानो प्रणतिपूर्वक अपने राज्यके चरणोंका स्पर्श करना चाहिये।

और अिस कार्यक्रमकी हर चीज बहुत सावधानीके साथ सच्ची श्रद्धासे की जाय। कहीं भी कृपाका भाव नहीं दिखना चाहिये। चारों तरफ मुक्त अुत्सवका वातावरण होना चाहिये। अुसमें यहां-वहां बहुत ज्यादा कैमरामेन और फैशनपरस्त लोग घूमते नहीं दिखने चाहिये। तो १५ अगस्त, १९५५ के दिन राष्ट्रपति भवनमें और सारे राजभवनोंमें अिस कार्यक्रमका आयोजन होना चाहिये। और फिर प्रतिवर्ष अुसकी पुनरावृत्ति होनी चाहिये।

(अंग्रेजीसे)

भूदान-प्राप्ति और वितरण

[जून १९५५ तक]

	प्रदेश	कुल भूमि-प्राप्ति (अेकड़में)	वितरित भूमि (अेकड़में)
१.	आसाम	१,९५०	—
२.	आंध्र	२१,५१६	६०
३.	अुत्कल	१,५५,७१६	३,२३६
४.	अुत्तरप्रदेश	५,४७,४०२	९६,३७८
५.	कर्नाटक	२,८०३	—
६.	केरल	२५,११३	३१५
७.	गुजरात	३७,५७८	३,२३५
८.	तामिलनाड	३७,८८२	५३०
९.	दिल्ली	९,२४५	९०
१०.	पंजाब-पेप्सू	१३,९८३	७९२
११.	बंगाल	१०,५३९	१,२२१
१२.	बंबअी	१२३	—
१३.	बिहार	२३,५६,१५६	२५,२७०
१४.	मध्यप्रदेश	९९,२३७	३४,१८०
१५.	मध्यभारत	५१,९८७	३११
१६.	महाराष्ट्र	२५,६४९	१,००१
१७.	मैसूर	६,६८०	—
१८.	राजस्थान	३,४५,९७५	१०,४२८
१९.	विंध्यप्रदेश	६,६५०	७७१
२०.	सौराष्ट्र	४१,०००	१,५००
२१.	हिमाचल प्रदेश	२,०२५	—
२२.	हैदराबाद	१,०७,२२५	३३,४०३
	कुल	३९,०६,४३४	२,१२,७२१

अुड़ीसामें प्राप्त सर्वस्व-दानके ग्राम: २९५

अिन २९५ गांवोंमें से १८३ गांव तो अकेले कोरापुट जिले (अुत्कल) ने दानमें दिये हैं, जहां विनोबाजी आजकल यात्रा कर रहे हैं।

(अंग्रेजीसे)

कृष्णराज मेहता
दफ्तर-मंत्री
अ० भा० सर्व-सेवा-संघ

विषय-सूची

		पृष्ठ
भूदान – प्रेम और करुणाका आन्दोलन — २	च० राजगोपालाचार्य	१७७
व्यापारिक विज्ञापन	क्षितीन्द्रकुमार नाग	१७८
बी० सी० जी० का टीका	श्याम के० पंडित	१७९
नयी समाज-रचनाके लिअे शिक्षा	मगनभाई देसाई	१८०
कानपुरकी हड़ताल	मगनभाई देसाई	१८१
सार्वभौमिक धर्म	विनोबा	१८१
अुड़ीसामें विनोबा — ८	नि० दे०	१८२
१५ वीं अगस्तके अुत्सवका आयोजन – अेक सूचना		१८३
भूदान-प्राप्ति और वितरण	कृष्णराज मेहता	१८४

www.vinoba.in